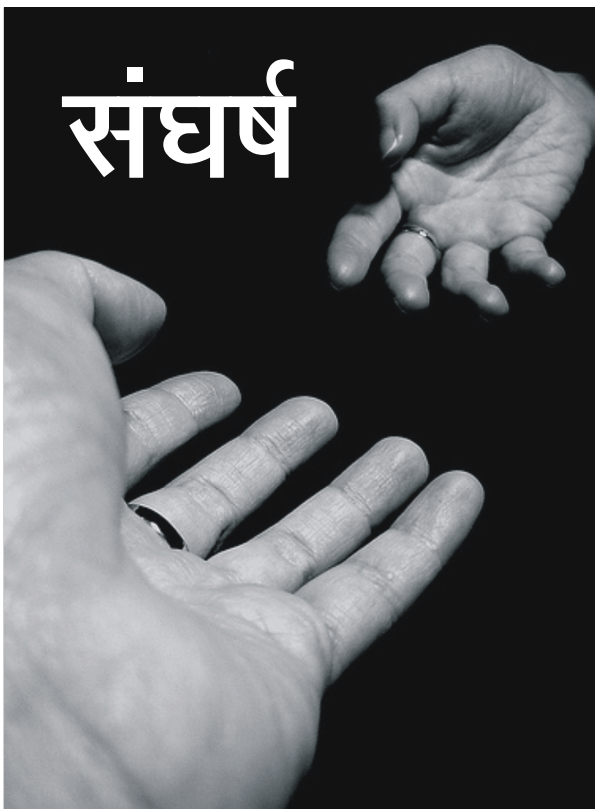


संघर्ष



आखिर एक दिन हरेन्द्र और मीता दोनों दृढ़ निश्चय के साथ शास्त्रीजी के पास पहुँचे। दोनों को एक साथ देखकर शास्त्रीजी कुछ चौंके जरूर थे, पर आश्चर्य उन्हें नहीं हुआ था। वो तटस्थ भाव से बैठे रहे। मीता की माता जी रसोई में काम करते-करते बाहर आ गयी थी। उन्होंने मीता को हरेन्द्र के साथ देखकर हाय तौबा मचानी शुरू कर दी थी। शास्त्रीजी ने अपनी बुलन्द आवाज़ में उन्हें चुप रहने का आदेश सुना दिया था। वो एकदम चुप हो गयी थीं। शास्त्रीजी ने पुनः अपनी नज़रें हरेन्द्र और मीता पर टिका दीं। हरेन्द्र ने साहस करके कहा कि हम दोनों शादी करना चाहते हैं।

टेबल पर पड़ी डाक में शादी के दो निमंत्रण पत्र भी थे। मैं अक्सर वैवाहिक कार्यक्रमों के निमंत्रण पत्र बुकशेल्फ में रखती हूँ या फिर टेबल पर रख देती हूँ, जिससे मेरी लेखन से सम्बंधित डाक की भीड़ कहीं खो ना जाये। दोनों निमंत्रण पत्रों में देखा तो एक तो भोपाल का था। वहाँ से किसी प्रशंसक ने अपने विवाह में आने का इस्तरार करते हुए भेजा था। तारीख पर नज़र गयी तो पाया आज एक मई है। भोपाल में प्रशंसक की शादी चार मई को है, सम्भव नहीं हो पायेगा। फोन पर शुभकामनाएँ देना और कोरियर से गिफ्ट भेजना उचित रहेगा। दूसरा निमंत्रण रतलाम का ही था। नाम देखा तो हरेन्द्र की शादी का कार्ड सादा किन्तु खूबसूरत था। दिनांक पाँच मई जाना जरूरी है। हरेन्द्र का नाम पढ़ते ही मेरे चेहरे के सामने लगभग महीने भर पहले हरेन्द्र से हुई उस मुलाकात के पल फिर घूम गये, जब उसने कहीं मेरी एक कहानी 'गुलाब' पढ़ी थी। उस कहानी की नायिका की पीड़ा ने कहीं भीतर तक उसे स्पर्श किया था। वो मुझसे मिला तब उसके कहे शब्द मुझे आज भी याद हैं - 'कैसे दे पाती है आप पीड़ा, वेदना और प्रेम की कोमल भावनाओं को प्यारे-प्यारे शब्द। मुझे आपकी कहानी पसंद आयी।' मैंने कहीं कुछ महसूस किया। उसके चेहरे में, उसकी बातों में, बस फिर क्या था उसकी बेचैनी को मैंने शब्दों का जामा पहनाने की ठान ही ली थी। इसी बीच उसकी शादी का कार्ड भी आ गया था। पाँच मई, शाम के लगभग सात बजे हम हरेन्द्र की शादी के रिसेप्शन में पहुँचे। मैं, मेरे पति व मेरा दस वर्षीय बेटा।

स्टेज पर हरेन्द्र को शादी की बधाइयाँ दीं, तो उसके चेहरे पर मुझे एक ऐसी चमक दिखी, जो मीलों पैदल चलने के बाद मंज़िल मिल जाने पर चेहरे पर आती है। साथ ही खड़ी उसकी नवविवाहिता पत्नी मीता के चेहरे पर

भी वही चमक थी। संघर्ष के बाद मिली सफलता की सच्ची कहानी बयान कर रहे थे दोनों के चेहरे।

- 'मीता' मैंने धीरे से मीता को पुकारा।

- 'जी मैम'।

- 'अब यहाँ तो ये मैम छोड़ो, नाम से बोलो।'।

मीता कुछ कह ना सकी खामोश हो गयी। मुझे फिर उसे छेड़ना पड़ा। 'अब तो हर जन्म दिन धूम-धाम से मनेगा ना। जन्मदिन पर बुलाना तो नहीं भूलोगी?' - 'बिल्कुल नहीं मैम। जरूर बुलाऊँगी।' - 'फिर वही मैम।'।

- 'ओ ...SS। सॉरी-सॉरी।'।

एक हल्की हँसी चारों तरफ बिखर कर रह गयी। हम वापस आ गये हरेन्द्र को उसके नये संसार की बधाइयाँ देकर। घर पहुँचने तक रात्रि के दस बज चुके थे। जब सोने के लिये बेचैनी मन पर छायी थी। नींद से पलकें भारी हो रही थीं, पर नींद आ नहीं रही थी। यूँ ही बीस-पच्चीस मिनट हो गये। आखिर थक कर मैंने खिड़की का पर्दा पूरा खोल दिया। हल्का-सा हवा का झोंका आया और खिड़की के रास्ते मेरी पलकें बंद होने लगीं, मगर उस ठण्डी बयार ने भी नींद को मेरी पलकों में उतरने नहीं दिया। कुछ समय करवटें बदलने के बाद आखिर मैं उठकर बैठ गयी। खिड़की से देखा तो दूर तक बिखरी हरियाली और पेड़ों की खामोशी का राज था। चांद आसमान पर धीमी गति से सफ़र कर रहा था। सितारों को आज शायद उसका साथ नहीं भा रहा था। इसलिए सितारे कुछ दूरी पर थे।

मन फिर हरेन्द्र और मीता की शादी में उलझ कर रह गया। जन्मदिन, हाँ जन्मदिन पर ही हरेन्द्र ने मीता को पहली बार देखा था। गौर से यूँ कभी हरेन्द्र ने इस नज़र से मीता को नहीं देखा था। हरेन्द्र और मीता के परिवार वालों के आपस में पारिवारिक व प्रेमपूर्ण सम्बंध थे। पारिवारिक सम्बंध होने से बच्चों व सदस्यों का एक दूसरे के घर

आना-जाना सामान्य सी बात थी। पूरी कॉलोनी में दोनों परिवारों के अच्छे सम्बंधों की चर्चा भी होती रहती थी। हरेन्द्र के पिता रेलवे की नौकरी में थे। वही मीता के पिता भी रेलवे की नौकरी में थे। रेलवे क्वार्टर भी दोनों के आमने-सामने ही थे। जहाँ मीता ब्राह्मण जाति की थी, वहीं हरेन्द्र छोटी जाति का था, किन्तु सम्बंधों में जाति की दीवार कभी भी बाधक नहीं बनी। खाना-पीना, त्योहारों में शामिल होना तो सामान्य-सी बात थी। वहीं दोनों परिवार दुःख में भी एक दूसरे का साथ देते थे, सहायता के लिए तत्पर रहते थे। जहाँ हरेन्द्र के परिवार में एक बहन और एक छोटा भाई था, वहीं मीता के दो भाई जो उससे बड़े थे और एक छोटी बहन थी।

इन्ही सम्बंधों के चलते दोनों परिवार एक दूसरे के पारिवारिक समारोह में भी सम्मिलित होते रहते थे। हरेन्द्र भी अनेक बार मीता के घर आता-जाता था। मीता का भी हरेन्द्र की मौसी जी व बहन से लगाव था, जिसके चलते वह हरेन्द्र के घर निस्संकोच चली जाया करती थी। हरेन्द्र को लेकर उसके मन में प्रेम जैसी कोई भावना कभी नहीं उभरी। जन्मदिन पर हरेन्द्र के सभी परिवार वाले मीता के घर पर रात्रिभोज पर आमंत्रित थे। मीता के पिता लीलाधर शास्त्री ने हरेन्द्र के पिता रामलाल चौहान के परिवार के अतिरिक्त किसी को भी आमंत्रित नहीं किया था। मीता तो यूँ भी जन्मदिन मनाने के पक्ष में कभी रही नहीं। छोटी बहन रीतू के ज़िद करने पर उसे राजी होना पड़ा। उस दिन मीता ने पहली बार साड़ी पहनी थी। हमेशा ढीले-ढाले गाउन में और सलवार सूट में रहने वाली मीता को पहली बार हरेन्द्र ने साड़ी में देखा। तब तो उसे वह अच्छी लगी। मीता को यूँ तो सुन्दर बिल्कुल भी नहीं कहा जा सकता था। सामान्य श्रेणी में ही रखा जा सकता था। गेहुँआ रंग, नाक नक़्श भी ठीक ही कहे जा

सकते थे और दरमियाना कद। स्वभाव उसका मिठास भरा था। व्यवहार कुशल थी, वहीं घर के कार्यों में भी वह कुशल थी। एम.ए. करने के बाद वह एक निजी स्कूल में शिक्षिका का कार्य कर रही थी। शिक्षा का भी उपयोग हो रहा था। साथ ही उसका थोड़ा खर्चा भी निकल जाता था। हरेन्द्र को मीता से इक्कीस कहा जा सकता था। हरेन्द्र का रंग साफ था, नाक-नक्श अच्छे थे, कद लम्बा था। वह सरकारी सेवा में था और उसका वेतन भी आकर्षक था।

जन्मदिन पर परिवार के सदस्यों की गहमा-गहमी के बीच हरेन्द्र कुछ नहीं कह पाया। बस डिनर कर जन्मदिन की बधाई देने के बाद वह अपने घर आ गया। माँ ने मीता को उपहार में साड़ी ही दी थी, जो मीता को भी पसंद आयी और उसने भावुक होकर हरेन्द्र की माताजी के चरण स्पर्श किये थे।

जन्मदिन पर साड़ी पहनी मीता ने हरेन्द्र को बेचैन कर दिया। साड़ी पर हल्के मेकअप और मोतियों वाली ज्वेलरी मीता को सुन्दर और आकर्षक बना रही थी। हफ्तों गुजर गये, हरेन्द्र को मीता के घर गये। बस वह मीता के ख्यालों में डूबता-उतरता रहता। समझ नहीं पा रहा था कि क्या करे, क्या न करे? आखिरकार उसने दृढ़ निश्चय किया और जा पहुँचा मीता के स्कूल। शाम के पाँच बजे मीता के स्कूल की छुट्टी होती है और बस स्टैण्ड तक लगभग सवा पाँच बजे तक वह पहुँच जाती है। हरेन्द्र ने अपनी मोटर साइकिल उठायी और जा पहुँचा बस स्टैण्ड पर। उसने जाकर गाड़ी रोकी ही थी, कि सामने से मीता आती दिखी। मीता की नज़रें जैसे ही हरेन्द्र पर पड़ीं, उसकी आँखों में एक विशेष लहर उभर कर फिर लुप्त हो गयी। ये बात हरेन्द्र ने साफ-साफ महसूस की, तो उसे दिल का बोझ थोड़ा हल्का होता हुआ लगा। 'तुम यहाँ?' - मीता ने पूछा। 'हाँ, कुछ काम से गुजर रहा था। सोचा कि तुम्हारे स्कूल की छुट्टी का भी समय हो ही रहा है, तो तुम्हें लेता हुआ चलाँ।' कहते हुए हरेन्द्र ने मीता के चेहरे पर नज़रें टिका दीं। - 'ठीक है।' कहती हुई मीता हरेन्द्र के पीछे बैठ गयी।

यूँ तो अनेक बार वह हरेन्द्र के साथ कभी न कभी किसी काम से आ-जा चुकी है। उसे विशेष नहीं लगा था, पर आज कुछ अलग ही भाव उसके मन में उठ रहे थे। मोटर साइकिल पर बैठते समय भी हरेन्द्र आज जाना-पहचाना न लगते हुए कुछ अलग ही लग रहा था। आज हरेन्द्र को देखने की इच्छा होते हुए भी न जाने क्यों मीता उससे नज़रें मिलाने में संकोच महसूस कर रही थी। मीता के बैठते ही हरेन्द्र ने मोटर साइकिल स्टार्ट की। मोटर साइकिल घर की दिशा में न जाते देखकर मीता ने तुरन्त पूछा- 'हरेन्द्र ये हम कहाँ जा रहे हैं? घर तो इस तरफ नहीं है।' - 'मैंने कब कहा कि हम घर जा रहे हैं?' हरेन्द्र सड़क पर देखते हुए बोला। - 'फिर कहाँ?' मीता के स्वर में उलझन स्पष्ट थी। - 'कहीं भगा के नहीं ले जा रहा हूँ, चुपचाप बैठी रहो।' हरेन्द्र ने कहा। अब मीता को चुप रहना ही था। मोटर साइकिल बरबड़ हनुमान मंदिर के सैलाना रोड की तरफ जा रही थी। आज मंगलवार तो नहीं है, गुरुवार है। मंगलवार को ही हनुमान जी के दर्शन

करना अच्छा रहता है। - 'मैंने कब कहा तुम्हें मंदिर दर्शनों के लिए ले जा रहा हूँ।' हरेन्द्र ने मोटर साइकिल मंदिर के बाहर पार्किंग में रोकते हुए कहा। - 'तो फिर बात क्या है?' बोलो ना घर पर सब इंतज़ार कर रहे होंगे। मीता के स्वर में परेशानी साफ झलक रही थी। - 'इधर आओ मुझे तुमसे कुछ पूछना है।' हरेन्द्र मंदिर के पास ही बने बगीचे में जाता हुआ बोला। - 'मीता ने कहा, बात तो घर पर भी पूछ सकते थे। यहाँ आने की क्या ज़रूरत पड़ गयी?' - 'नहीं यहीं ठीक है।' आओ, हरेन्द्र ने वहाँ बनी सीमेन्ट की बेन्च पर बैठते हुए कहा। मीता भी करीब आकर बैठ गई।

रामलाल चौंके- 'तुम लोगों को पता है कि वो फेमिली पण्डित जाति की है और रूढ़िवादिता उन लोगों की नस-नस में बसी है। वे लोग कभी भी इस रिश्ते के लिये तैयार नहीं होंगे। हम लोग छोटी जात में आते हैं। रेलवे की नौकरी है, तो क्या हुआ? ब्राह्मण परिवार इस युग में भी जात-पाँत और छुआछूत से ग्रस्त है। शास्त्रीजी कभी अपनी पुत्री को छोटी जाति में ब्याहने के लिए तैयार नहीं होंगे।

आज मंदिर में भीड़ भी नहीं थी। मंगलवार के दिन भीड़ अधिक रहती है। यूँ भी भारतीय संस्कृति में दिनों के हिसाब से भगवान की भक्ति को बाँट दिया गया है। मंगलवार का दिन हनुमान जी का, सोमवार शिव जी का, बुधवार गणपति जी का। चाहे वर्ष भर पूजा मत करो किन्तु दिन विशेष में पूजा कर सभी मनोकामनाएँ पूरी करवा लो। - 'कहाँ खो गयी?' हरेन्द्र ने पूछा। - 'कहीं नहीं।' मीता हड़बड़ाते हुए बोली। - 'सुनो मैं तुम्हें यहाँ एक बात पूछने के लिये लाया हूँ।' हरेन्द्र ने भूमिका ज्यादा लम्बी नहीं की। 'कौन-सी बात?' मीता के स्वर में वापस संकोच उभरने लगा था। धड़कनें न चाहते हुए भी तेज़ होने लगी थीं। माथे पर स्वेद के कण मोतियों से चमक उठे थे और शब्द कहीं खो गये थे। अधर कुछ कहना चाहते थे, पर बोलने में असमर्थ थे। शब्द अधरों का साथ नहीं दे पा रहे थे। आँखें थीं कि हरेन्द्र की आँखों में देखना भी चाहती थीं, लेकिन वे भी पलकों का साथ नहीं दे रही थीं, क्योंकि पलकें इस कदर झुकी हुई थीं, मानो कोई बोझ उन पर रख दिया गया हो। उंगलियाँ भी बार-बार दुपट्टे में जाकर अटक जाती थीं। - 'देखो मीता। मेरी तरफ देखो।' - 'नहीं तुम बोलो जो बोलना चाहते हो।' मीता

बड़ी मुश्किल से बोली। - 'देखोगी नहीं मेरी तरफ।' हरेन्द्र का स्वर भी थोड़ा काँपने लगा था। - 'वही सुनना चाहती हो जो मैं कहने वाला हूँ।' मीता खामोश थी। - 'देखो मैं तुमसे प्रेम करने लगा हूँ और शादी करना चाहता हूँ, मुझे तुम्हारा जवाब चाहिये।' मीता खामोश रही। शरीर के पोर-पोर में मानो अजीब-सी खुमारी दौड़ने लगी थी। - 'बोलो ना मीता। देखो फिर घर भी चलना है।' - 'अच्छा आओ चलो, मंदिर में दर्शन कर लेते हैं।' हरेन्द्र ने कहा। मीता की साँस में साँस आयी। वो जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाती हुई मंदिर की ओर चल दी। मंदिर के बाहर लगे नल पर हाथ धोकर, उसने ठण्डे पानी से चेहरा भी धोया, तो एक ठण्डक-सी महसूस हुई। मन में लगा कि अब थोड़ी घबराहट कम है और वह शायद ठीक से हरेन्द्र से बात कर सकती है। वह ये सोच ही रही थी कि हरेन्द्र ने फिर उसका ध्यान भंग किया, जो न जाने कब से उसके चेहरे पर उतरते-चढ़ते भावों को गौर से देख रहा था। वो फिर थोड़ा शरमायी। 'अब आओ भी देखो जल्दी करो' उसने धीरे से कदम मंदिर की तरफ बढ़ा दिये। हनुमान जी की मूर्ति के समक्ष पुजारी न जाने कौन से ग्रंथ का मन ही मन पाठ करने में लगा था, मगर पुजारी का ध्यान उन लोगों की तरफ नहीं था। वो अपने में लीन था। दुपट्टा सिर पर रखकर मीता ईश्वर के समक्ष नतमस्तक हो गयी। आँखें उसकी खुद-ब-खुद मुंद गयीं, तो आँखों के समक्ष हरेन्द्र का चेहरा आ गया। हे ईश्वर! कैसी परीक्षा है मेरी? प्रेम तो मैं भी करती हूँ हरेन्द्र से, लेकिन क्या घर वाले आसानी से सहमत होंगे? कहीं प्रेम का अंत दुःखद न हो? मीता विचारों के भँवर में उतरने-चढ़ने लगी। दिमाग ने कहा-प्रेम हो या फिर अन्य कोई मंज़िल, संघर्ष और प्रयासों पर निर्भर करता है कि आप अपने प्रयासों में कितने सफल हैं? किसी भी कार्य को करने में मुश्किलें तो आयेंगी ही। इनसे कैसा घबराना? कंधे पर किसी का स्पर्श महसूस कर मीता की आँखें खुलीं, तो देखा हरेन्द्र पुजारी के चरण स्पर्श कर प्रसाद ले चुका था। वह भी तुरंत पुजारी के चरणों में झुकी और प्रसाद लेकर हरेन्द्र के साथ बाहर की तरफ चल दी।

जब दोनों अपने-अपने घर पहुँचे, तो दोनों की आँखों में एक दृढ़ निश्चय झलक रहा था। हरेन्द्र समझ नहीं पा रहा था कि बात शुरू कहाँ से करें? बहुत दिनों तक सोचता रहा, सोचता रहा। आखिर एक दिन उसने अपनी माता जी को पूरी बात बताकर आगे बढ़ने का निश्चय किया। इससे उसके मन का बोझ कुछ हल्का हुआ। शाम को रामलाल चौहान जैसे ही घर में आये उनको वातावरण सामान्य नहीं लगा। कुछ कहीं बदला था, लेकिन क्या बदलाव था? ये वो महसूस नहीं कर पाये। वातावरण में एक भारीपन-सा भी उन्होंने महसूस किया। परिवार के हर सदस्य के चेहरे पर एक तनाव-सा भी झलक रहा था। पर क्यों? उन्होंने सोचा पूछा जाये, पर ऐसा लगा कोई भी सदस्य ठीक से जवाब नहीं देगा। ये सोचकर उन्होंने बाथरूम का रुख किया। जब फ्रेश होकर लौटे, तो ठण्डे पानी ने उनके चेहरे और मूँड को भी थोड़ा फ्रेश कर दिया था। रात के खाने के बाद ही बात करेंगे।

खाने में भी रामलाल का मन नहीं लगा। बड़ी जल्दी से कुछ कौर खाकर उठ गये। ऐसे तनाव भरे माहौल में भूख भी मानो मर गयी थी। बाथरूम से जब हाथ धोकर आये तो छोटी पुत्री रीतू ने नेपकिन आगे बढ़ा दिया। नेपकिन हाथ में लिए-लिए ही वो ड्राइंग रूम की ओर चल दिये। बाकी के सदस्य भी उनके पीछे-पीछे। केवल हरेन्द्र ही अपने रूम में जाकर बैठ गया। प्रतीक्षा करने लगा पापा द्वारा लगायी जाने वाली आवाज की।

ड्राइंग रूम में सबसे पहले बात छेड़ी हरेन्द्र की माँ ने। बिना किसी स्पष्ट भूमिका के सीधे-सीधे। सुनो, मीता और हरेन्द्र एक दूसरे को पसंद करते हैं और शादी करना चाहते हैं। उत्तर के लिए उसने अपनी नज़रें पति के चेहरे पर जमायीं। 'ये क्या बकवास है?' रामलाल चौंके- 'तुम लोगों को पता है कि वो फेमिली पण्डित जाति की है और रूढ़िवादिता उन लोगों की नस-नस में बसी है। वे लोग कभी भी इस रिश्ते के लिये तैयार नहीं होंगे। हम लोग छोटी जात में आते हैं। रेलवे की नौकरी है, तो क्या हुआ? ब्राह्मण परिवार इस युग में भी जात-पाँत और छुआछूत से ग्रस्त है। शास्त्रीजी कभी अपनी पुत्री को छोटी जाति में ब्याहने के लिए तैयार नहीं होंगे। जो परिवार से अच्छे सम्बंध है, वो भी खराब हो जायेंगे। हरेन्द्र से बात करके मैं उसे समझाता हूँ। 'हरेन्द्र ...S।' रामलाल ने ड्राइंग रूम से ही आवाज दी। हरेन्द्र तो जैसे इंतज़ार में था ही। लपक कर ड्राइंग रूम में आ गया। पिता के सामने की कुर्सी पर बैठ गया।

पिता की आवाज की कठोरता भाँपकर हरेन्द्र थोड़ा तो अंदर से काँप गया। फिर हिम्मत कर बोला - 'जी पिता जी।' - 'मीता वाली बात सही है क्या?' - 'हाँ। पिता जी।' - 'तुम निश्चय कर चुके हो।' पिता ने बात आगे बढ़ायी। - 'जी हाँ, पिता जी।' तो ठीक है मैं स्वयं मीता के घरवालों से बात करता हूँ। यदि वो राजी हो गये, तो ठीक है। यदि राजी नहीं हुए तो? - 'तो भी शादी तो मीता से ही करूँगा।' हरेन्द्र के स्वर में दृढ़ता झलक रही थी।

दूसरे दिन शाम को रामलाल जी शास्त्रीजी के घर पहुँचे। घर का वातावरण सामान्य नहीं लगा, शायद घर में हरेन्द्र और मीता के विषय की चर्चा हो चुकी थी। फिर भी बरामदे से घर के माहौल का अंदाज़ा लगाकर उन्होंने आवाज़ लगायी। - 'शास्त्रीजी, शास्त्रीजी।' - 'भीतर चले आइये।' शास्त्रीजी का स्वर उभरा। बैठक में कदम रखते ही समझ गये कि आज कुछ असामान्य-सा है। शास्त्रीजी के हाथों में कोई पत्रिका थी, जिसे शायद वो पढ़ रहे थे। 'कहिये?' शास्त्रीजी ने सोफे पर बैठे-बैठे ही कहा। 'जी-वो।' रामलाल जी असमंजस में थे। न बैठने के लिए कहा ना मुस्कुराकर जवाब दिया। सीधे-सीधे- 'कहिये।' कहना तो था, इसलिए रामलाल जी खुद ही कुर्सी पर बैठ गये। 'शास्त्रीजी, एक निवेदन करना चाहता हूँ।' रामलाल जी ने धीमे स्वर में कहा। - 'आपका कोई निवेदन मैं सुनना नहीं चाहता। मुझे मालूम है, आप क्या निवेदन करना चाहते हैं।' शास्त्रीजी की कठोर ऊँची आवाज़ बैठक में गूँजी। - 'लेकिन आप थोड़ा सुनिये तो।' रामलाल जी ने फिर कोशिश की। - 'नहीं मैं कुछ सुनना



नहीं चाहता। आपसे भी यही कहूँगा कि आप यहाँ से चले जायें और हमेशा के लिए हमारे पारिवारिक सम्बंध खत्म हो गये।' - 'शास्त्रीजी।' रामलाल ने फिर कोशिश की। - 'क्या शास्त्रीजी...!' शास्त्रीजी की चुप्पी टूटी- 'आपके बेटे ने हमारे विश्वास को तोड़ा है। मेरी पीठ में छुरा घोंपा है। ईश्वर आपको कभी माफ नहीं करेगा। मेरी बेटी मीता को बहकाया है आप लोगों ने। आप यहाँ से चले जाइये और कभी भी हमें याद मत करिये।' 'चले जाइये आप।' शास्त्रीजी का स्वर फिर गूँजा। रामलाल जी ने फिर वहाँ रुकना ठीक नहीं समझा। हरेन्द्र और परिवार के अन्य सदस्य प्रतीक्षा ही कर रहे थे। रामलाल जी के पहुँचते ही सभी सदस्य उनको उत्सुकता से घेर कर खड़े हो गये थे। हरेन्द्र पिता के चेहरे को देखते ही समझ गया था कि उसके प्रेम की हार हुई है। उसने कुछ नहीं पूछा था।

फिर एक नया दौर शुरू हुआ मीता पर अत्याचारों का। कॉलेज की पढ़ाई पर रोक लगा दी गयी। जात-पाँत की दुहाई देकर उसकी इच्छाओं का गला घोट दिया गया। कहाँ ब्राह्मण, कहाँ नीची जात, समाज क्या कहेगा? मीता के बाद दूसरे बच्चों की शादी कैसे होगी? माँ ने तो हद कर दी थी कि एक दिन मीता से कह दिया साफ-साफ कि अगर उसने कदम घर से बाहर निकाला तो माँ आत्महत्या कर लेगी? बेबस होकर मीता चुपचाप किस्मत का तमाशा देखती रही। होठों को उसने हमेशा के लिए सिल लिया।

लगभग दो वर्ष इसी तरह से निकल गये। शास्त्रीजी ने इतनी दया की पुत्री पर कि नियमित कॉलेज जाना बंद करवा कर प्राइवेट शिक्षा जारी रखने की समझदारी दिखायी, जिससे मीता की पढ़ाई चलती रही। इसी बीच शास्त्रीजी ने मीता के विवाह के लिए कई वर देखे, जो मीता को पसंद भी कर गये, पर मीता ने स्पष्ट रूप से मना कर दिया कि वह फिलहाल शादी नहीं करेगी। अब चुप रहने की बारी शास्त्रीजी की थी। फिर भी वो बोले कि तुम बड़ी हो, तुम्हारी शादी के बाद ही दूसरे बच्चों की शादी सम्भव है। मीता ने भी उसी दृढ़ता से उत्तर दिया कि आप

छोटे की शादी कर दें, मैं अभी शादी नहीं करूँगी। उस दिन भी घर में हंगामा हुआ था- 'तुझे घर में बैठाकर छोटों की शादी कैसे कर दें?' मीता अपने फैसले पर अटल थी।

आखिरकार उसकी दृढ़ता के सामने शास्त्रीजी को झुकना ही पड़ा और उन्होंने मीता के बाद के एक पुत्र व एक पुत्री की शादी दो वर्षों के भीतर ही कर दी। इसी बीच मीता अपनी शिक्षा के साथ नौकरी के लिए भी आवेदन भरती रही, जिससे वह आत्मनिर्भर बन सके। वर्षों की मेहनत और तपस्या रंग लायी। उसे रेलवे में नौकरी के लिए चुन लिया गया। तृतीय श्रेणी के लिए। शास्त्रीजी ने यह सोचकर नौकरी की इजाज़त दे दी कि छोटों की शादियाँ हो ही गयी हैं। मीता ने भी एम.एस.सी. तक की पढ़ाई पूरी कर ली है। नौकरी से उसका मन बहला रहेगा। मीता ने यह काम जरूर अच्छा किया था, कि उसने इतने वर्षों में कभी भी हरेन्द्र से मिलने की कोशिश नहीं की, न ही हरेन्द्र ने मीता से। दोनों को एक दूसरे पर अटूट विश्वास था। इस अग्निपरीक्षा में दोनों ही तप रहे थे। इसी विश्वास के साथ कि विजयी हम ही होंगे।

जिस दिन मीता ने रेलवे की नौकरी पहली बार जॉइन की, उसे इस बात का विश्वास हुआ कि वह घर वालों को अब शायद मना लेगी? लेकिन मीता का ये कोरा भ्रम निकला कि वह मना लेगी। शास्त्रीजी अपनी ज़िद पर अडिग थे। हरेन्द्र के लिए उनके मन में कोई प्रेम नहीं था। इतने कठोर शायद वो इसलिए बने हुए थे। माँ की ममता भी शायद सूख गयी थी। बेटी के आँसुओं से नहीं पिघल रही थी। आखिर एक दिन हरेन्द्र और मीता दोनों दृढ़ निश्चय के साथ शास्त्रीजी के पास पहुँचे। दोनों को एक साथ देखकर शास्त्रीजी कुछ चौंके जरूर थे, पर आश्चर्य उन्हें नहीं हुआ था। वो तटस्थ भाव से बैठे रहे। मीता की माता जी रसोई में काम करते-करते बाहर आ गयी थी। उन्होंने मीता को हरेन्द्र के साथ देखकर हाय-तौबा मचानी शुरू कर दी थी। शास्त्रीजी ने अपनी बुलन्द आवाज़ में उन्हें चुप रहने का आदेश सुना दिया था। वो एकदम चुप हो गयी थीं। शास्त्रीजी ने पुनः अपनी नज़रें हरेन्द्र और मीता पर टिका दीं। हरेन्द्र ने साहस करके कहा कि हम दोनों शादी करना चाहते हैं। शास्त्रीजी ने मीता की तरफ अपनी नज़रें घुमायीं। पहले तो मीता को कहीं एक डर का अहसास हुआ कि कोई अनहोनी न हो जाये। किन्तु फिर भी उसने हिम्मत बटोरी और कहा- 'पापा अब तो थोड़ा रहम खाइये।' शास्त्रीजी ने कहा - 'यही तुम्हारा फैसला है? एक बार फिर सोच लो। ये अंतिम मौका है।' मीता और हरेन्द्र ने एक दूसरे की तरफ देखा फिर शास्त्रीजी की तरफ देखने लगे, मीता ने कहा- 'हाँ, पापा !' 'तो ठीक है आज के बाद तुम हमारे लिए मर चुकी, हम तुम्हारे लिए। आज के बाद अपना चेहरा मुझे मत दिखाना। अभी निकल जाओ मेरे घर से।' मीता ने देर नहीं की थी, हरेन्द्र के साथ उसी पल उसने घर छोड़ दिया था। हरेन्द्र के घरवाले तो राजी थे ही। इतने संघर्ष के बाद मनचाही मंज़िल पर पहुँचकर एक खुशनुमा सुकून था दोनों के चेहरे पर।

श्रीमती इन्दु सिन्हा

कार्यालय अधीक्षक, मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, रतलाम